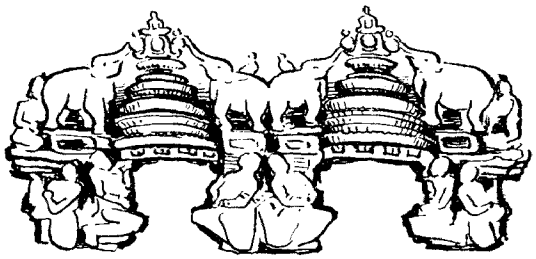

रत्नचन्द अग्रवाल
अध्यक्ष, पुरातत्त्व संग्रहालय-विभाग, उदयपुर

देबारी के राजराजेश्वर मंदिर की अप्रकाशित प्रशस्ति

मेवाड़नरेश महाराणा राजसिंह द्वितीय ने केवल सात वर्ष (संवत् १८१२ से १८१७) राज्य किया था उनके राज्य-काल का संवत् १८१२ का लेख उदयपुर के सांध्यगिरि मठ के पास शिवालय में लगा है और दूसरा लेख संवत् १८१७ का है जो उदयपुर के जगदीश मंदिर के पास एक सुरभि-स्तम्भ पर खुदा है (रिसर्चर-राजस्थान पुरातत्त्व विभाग की पत्रिका, वर्ष-१,अंक १, पृ० २६-३२). इसके बाद राजसिंह द्वितीय का ही भाई अरिसिंह द्वितीय शासक बना. उसके राज्यकाल में राजसिंह द्वितीय की माता बख्तकुँवरी (जो झाला वंश की थी) ने अपने पुत्र राजसिंह की मृत्यु हो जाने के कारण उसके सुकृत हेतु उदयपुर नगर से ८ मील दूर देबारी (उदयपुर घाटी का प्रवेश) के द्वार के सामने ही राजराजेश्वर मंदिर, वापी तथा पास की धर्मशाला का निर्माण कराया था. उसकी प्रतिष्ठा श्रावणादि वि० सं० १८१९ (चैत्रादि १८२०) शक संवत् १६८५ वैशाख सुदी ८ गुरुवार (जीव) को होकर प्रशस्ति रची गई थी. ६८ श्लोकों की यह बृहत् प्रशस्ति शिला पर अद्यावधि उत्कीर्ण न हो सकी. उसकी एक प्रति की प्रतिलिपि मुझे स्वर्गीय पं० गो० ला० व्यास जी के सौजन्य से प्राप्त हुई है. यह राजसिंह की माता की कृतियों, उसके मातृपक्ष के वंश वृक्ष और तत्कालीन इतिहास के लिये परम उपयोगी है. माननीय ओझा जी ने इसकी एक प्रतिलिपि श्री विष्णुराम भट्ट मेवाड़ा के संग्रह में देख कर उसका सारांश भी उदयपुर राज्य के इतिहास' (भाग २, पृ० ६६३) में प्रकाशित किया था. प्रस्तुत निबन्ध में श्री व्यास[1] जी द्वारा प्राप्त प्रतिलिपि को तनिक विवेचनादि सहित विद्वद्वर्ग के अध्ययनार्थ सर्व-प्रथम प्रकाशित किया जावेगा.

इस बृहत् प्रशस्ति के कुल ६८ श्लोक हैं तथा भाषा संस्कृत है. प्रारंभ में 'गणपति' वन्दना के उपरान्त प्रशस्तिकार 'सोमेश्वर' का उल्लेख है जिसने राजसिंह द्वितीय की माता के आदेशानुसार शिवालय व वापी की यह प्रशस्ति रची थी (श्लोक १). राजसिंहराज्याभिषेक काव्य की रचना भी भट्ट रूप जी के सुपुत्र इसी सोमेश्वर ने की थी (ओझा, उपर्युक्त पृ० ६४४ पाद टिप्पण २). तदनन्तर मेवाड़ के उदयपुर नगर के संस्थापक (श्लोक ७) महाराणा उदयसिंह प्रथम से लेकर राजसिंह द्वितीय तक का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है. आठवें श्लोक में उदयपुर को शक्रपुरी कहा है. राणा प्रताप ने यवनों (मुसलमानों) को मारा था (श्लोक ११), वीर अमरसिंह प्रथम ने राज्यलक्ष्मी की प्राप्ति की थी (श्लोक १२), उसका पुत्र कर्णसिंह था (श्लोक १३). उसके पुत्र जगतसिंह ने विष्णुमंदिर अर्थात् जगदीशमंदिर, षोडश महादान सम्पन्न कर मान्धातातीर्थ पर यश प्राप्त किया (श्लोक १४-१५). उसका पुत्र राजसिंह प्रथम था (श्लोक १६) जिसने समुद्र के समान बन्ध (अर्थात् राजसमुद्र बांध बंधाया. उसके पुत्र जयसिंह प्रथम ने भी तथैव बांध बंधाया (अर्थात् जयसमुद्र, श्लोक १७) उसके पुत्र अमरसिंह द्वितीय ने उदयपुर के राजप्रासादों में वृद्धि की

१. झालावाड़ संग्रहालय के संस्थापक व अध्यक्ष.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(श्लोक १८-१९) और उसके पुत्र संग्रामसिंह द्वितीय की ख्याति तो धर्मावतार के रूप में ही थी—उसते सोने के तीन तुलादान सम्पन्न किए थे (श्लोक २२, ओझा, उपर्युक्त, पृ० ६२१) और औरंगजेब के समय खण्डितांश जगदीश-मंदिर का जीर्णोद्धार कराया (श्लोक २३). यहाँ संग्रामसिंह द्वितीय की पर्याप्त प्रशंसा की गई है (श्लोक २० से २३). उसका पुत्र वीर जगत्सिंह द्वितीय (श्लोक २४-२७) था जिसने जगन्निवास नामक राजमहल का निर्माण कराया था (श्लोक २७, ओझा—पृ० ६३९). जिसकी प्रतिष्ठा संवत् १८०२ में हुई थी. उसका पुत्र प्रतापसिंह द्वितीय था (श्लोक २८-३१) जो अति प्रतापशाली था. यह केवल अतिशयोक्ति नहीं है. उसका एक मात्र पुत्र था राजसिंह द्वितीय (श्लोक ३२) जिसकी माता की यह प्रस्तुत प्रशस्ति है.

श्लोक ३२ के उपरान्त राजराजेश्वर मंदिर को बनाने वाली राजमाता बखतकुँवरी (झाला कर्ण की पुत्री व प्रतापसिंह द्वितीय की राणी) के पिता के वंश का परिचय निम्नांकित है :—पश्चिम समुद्र तट पर (काठियावाड़ में) झालावाड़ देश में रणछोड़पुरी नाम की नगरी है (श्लोक ३३-३४), वहाँ का राजा झाला मानसिंह हुआ (श्लोक ३५) जिसके पीछे क्रमशः चन्द्रसिंह, अभयराज, विजयराज, सहसमल्ल, गोपालसिंह और कर्ण हुए (श्लोक ३५ से ४२). कर्ण की पुत्री बखतकुँवरी थी (श्लोक ४३) जो मेवाड़ नरेश महाराणा प्रतापसिंह की पत्नी थी (श्लोक ४४). उसके पुत्र का नाम था राजसिंह द्वितीय (४५ तथा आगे).

माननीय ओझा जी (उपर्युक्त, पृ० ६६३) के अनुसार 'ऊपर लिखे राजाओं में मानसिंह तो ध्रांगधरा का स्वामी था. उसके दूसरे पुत्र चन्द्रसिंह के चौथे पुत्र अभयसिंह (अक्षयराज) को बस्तर की जागीर मिली थी. उसके पुत्र विजयराज ने रणछोड़ जी के भक्त होने के कारण अपनी राजधानी लख्तर का नाम रणछोड़पुरी रक्खा—कालीदास देवशंकर पंडया, गुजरात, राजस्थान, पृ० ४७१-७२'.

महाराणा राजसिंह द्वितीय ने राज्याभिषेक के समय स्वर्णतुलादान किया था (श्लोक ४७) वह उदारचित्त नरेश था. वह प्रतापसिंह का पुत्र यशस्वी था (श्लोक ५१) और उसकी (राजसिंह की) पटरानी थी गुलाबकुमारी (श्लोक ५२), राजसिंह की छोटी रानी[1] थी फतेहकुमारी (श्लोक ५३). गुलाब कुमारी का रतलाम से सम्बन्ध था (श्लोक ५५). राजसिंह की माता तो हरि-भजन में व्यस्त रहती थी (श्लोक ५६), वह झाला वंश की पुत्री बखतकुँवरी थी (श्लोक ५७), राजमाता ने राजसिंह के पुण्यहेतु नगर के प्रवेश द्वार (अर्थात् देबारी द्वार के समक्ष) राजराजेश्वर का मंदिर-वापी आदि का निर्माण कराया था (श्लोक ५९-६०). राजराजेश्वर शंकर की पूजाहेतु ही वापी को बनवाया था. (श्लोक ६१).

६२ वें श्लोक में संवत्-मास-दिन-तिथि आदि अंकों व अक्षरों दोनों में अंकित हैं, यथा—विक्रम संवत् १८१९ शक संवत् १६८५ माधव (वैशाख) मास की शुक्ल (अमलतर) पक्ष की ८ वीं तिथि पुष्यनक्षत्र मिथुन लग्न दिन बृहस्पतिवार आदि. इस तिथि को मंदिर की प्रतिष्ठा विधिवत् सम्पन्न हुई थी. उस समय प्रतिष्ठा का श्रेय द्विजवर 'नन्दराम' को प्राप्त था. 'राजसिंहराज्याभिषेक[2]—काव्य' में भी इस व्यक्ति का नाम अंकित है. प्रतिष्ठा के समय राजमाता ने ब्राह्मणों को गौ, सोना, हाथी, घोड़े, रथ, जेवर, आदि बहुत सी चीजें दान में दी थीं (श्लोक ६५). आगे ६६-६७ श्लोकों में भी उसके दान का उल्लेख है. ऐसा करने से तथा वापी-शिवालय निर्माण व विधिवत् प्रतिष्ठा द्वारा राजमाता ने चिरस्थायी पुण्य प्राप्त किया (श्लोक ६८, अन्तिम पंक्ति).

स्वर्गीय श्री व्यास के सौजन्य से प्राप्त इस प्रशस्ति का निम्न स्वरूप तथैव प्रस्तुत किया जा सकता है यद्यपि इसमें कहीं-२ अशुद्धियाँ रह गई हैं :

---

१. द्रष्टव्य ओझा, उपर्युक्त, पृ० ६४७. राजसिंहराज्याभिषेक काव्य में भी राजसिंह द्वितीय द्वारा सम्पन्न स्वर्णतुला का उल्लेख है. ओझा-उपर्युक्त, पृ० ६४४, पादटिप्पण.

२. ओझा, उपर्युक्त, पृ० ६४५.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

विघ्नेश्वरं सगिरीशं गिरिजा समेतं, सोमेश्वरो द्विजवरो विबुधांश्च नत्वा ।
श्री राजसिंह जननीकृत शम्भूसद्म वापी प्रशस्ति रचना क्रममातनोति ॥ १

विष्णोर्नाभिसरोरुहान्त, रुदितो वेधाविधायासिलं विश्वं स्थावरजङ्गमात्मकमसौ तद्रक्षणायासृजत् ।
क्षत्रं दुष्टनिवर्हणाय च सतां संरक्षणाय स्वयं यत्तेजोबल संयुतं भगवतो नैसर्गिकं जृम्भते ॥ २

तस्यान्ववायाविह सम्प्रसूतौ मन्वन्तरे सूर्यनिशाकराभ्याम् ।
वंशस्तयोरं शुभतो विशेषा—द्गुणैर्गिरीयाति हसं प्रदिष्टः ॥ ३

यत्रान्वये रघु-भागीरथ यौवनाश्च मान्धातृ-पार्थिववराः शतशोप्यभूवन् ।
सत्यव्रतः सकल गौर गुणाभिरामो रामो विभूषयति वंशमशेषमेकः ॥ ४

अग्रेऽभवन् राजपदाभिधानाः पश्चादभवनदिति प्रसूताः ।
ततः परं रावलशब्दवाच्याः राणाः बभूवुस्तदनन्तरं ते ॥ ५

राणास्ते सुचरिताः मेदपाटदेशे राज्यं तद्बुभुजरिहैकलिङ्गदत्तम् ।
तेषां को विहितपराक्रमानशेषान् दानादीन्दवि भुवि वर्णितुं समर्थः ॥ ६

तत्र पूर्वमभवद्विशुद्धधीः कीर्त्तिमानुदयसिंह भूपतिः ।
येन भूमिबलयैकभूषणम् भूभृतोदयपुरं विनिर्मितं ॥ ७

सोयं पुरी शक्रपुरीव नार्यः समानरूपा सुरसुन्दरीभिः ।
गुहा विमानावलि तुल्यरूपा नरासुरा भाति नृपः सुरेशः ॥ ८

सुरनरपुर गर्व सर्वं तायाम् प्रभवति यत्सुरराजसेवितांघ्रिः ।
निवसति भगवानिहैकलिङ्गो जनपद भूपतिः लोक रक्षणाय ॥ ९

प्रतापसिंहोस्य सुतोऽथ जज्ञे वीरो महीमण्डलमंडनं यः ।
यस्य प्रतापाऽनल दीप्तितप्ताः अस्त्रैं स्वदेहान् रिपवः शिषुयुः ॥ १०

अप्येकवीरो यवनानशेषान् जिग्ये जघानारिबलं समग्रम् ।
विदारयन् वैरिगजं वृजं यो मुक्ताफलस्यर्धि यशोवितेन ॥ ११

तस्मादभूदमरसिंहनरेश्वरोसौ वीरो बली सकलशस्त्रभृतां वरिष्ठः ।
क्षोणीभुजा विशदकीर्त्तियुजा सदैव रेमे रमे बहरिणा भुवि राज्यलक्ष्मीः ॥ १२

कर्णसिंह इति तस्य भूपते—रात्मजः समभवदाधिपः ।
अंगराज इव योऽपरोर्थिनां चिन्तितार्थमखिलं व्यपूरयत् ॥ १३

ततो जगत्सिंह धराधिपोऽभवद् भाग्याधिपोऽस्त्रैं जगतीतलेऽस्मिन् ।
राजांगणादग्वतराव विष्णोः[1] प्रासादमभ्रानिह.....तान् ॥ १४

ससर्ज यः षोडशदानपंक्तीः मान्धातृतीर्थेऽवनिभृतकरीन्द्रः ।
तस्थौ स्वयं नर्मदा नीर.....[2] .....पूज...प्रणवं महेशम् ॥ १५

---

१. जगनाथ, जगदीश मंदिर का निर्माता जगत्सिंह प्रथम ही था.

२. १४-१५ श्लोक अशुद्धिपूर्ण हैं.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजराजास्य सुतो रसायां वीरो विडौजा इव राजसिंहः ।
ताटकतुल्यो धरणीगृहिण्याः सरः समुद्रोपम भाव बन्धः[1] ।। १६

जयसिंह भरेश्वरस्ततोऽभून्नयनदकरः शशीव लोके ।
स्वपितेव समुद्र तुल्य रूपं प्रवरं सोऽपि सरोवरं बबन्ध ।। १७

तस्मादभूदमरसिंह नराधिराजो मूर्धन्यराषपदशेषधराधिपानाम् ।
दूरीचकार विदुषां द्रविणौघदाने भाग्येषु दुर्गतिलिपिं बिधिनापि सृसृम् ।। १८

अमरपतिः समानरूपशीलो मरललना परिगीति शुद्धकीर्तिः
अमरनरपतिश्चकार सौधा नमर विलाससमाख्यान् प्रसिद्धान् ।। १९

तदंगजन्मा भुवनैकवीरो भूमंडलं भूषयति स्म राणा ।
संग्रामसिंह श्रुतशास्त्रधर्मा, धर्मावतारः प्रथित पृथिव्याम् ।। २०

अशेषशस्त्रास्त्रविधौ समर्प्यो धनुर्धरो धैर्यधरोप्यरिण्याम् ।
विलाङ्घितानैव कदापि भूपैः सकुस्त्र दत्तापि चिरं पदाज्ञा ।। २१

हेम्नस्तुलानां ततयस्य कर्ता संग्रामसिंहो वसुधैकभर्ता ।
बभूव सर्वार्तिहरः प्रजानां, त्रिनेत्रसेवारसिकोऽन्वहं यः ।। २२

निरन्तरं त्र्यम्बकपादपद्म, पूजा फला वास समस्तकामः ।
देवालयस्योद्धरणाय बुद्धिं, चक्रे जगन्नसुरे[2]श्वरस्य ।। २३

ततो जगत्कीर्तितसच्चरित्रो, वीरो जगतसिंह नरेश्वरो भूता ।
यशः....नयां धाम महानुभावो, महीपतीनां प्रवरो मनस्वी ।। २४

यश्चन्द्र...स्मरऽभौकनिष्ठस्तत्पूजया प्राप्तसमस्तकामः ।
बुभोज भूमि विविधौ विलासैः, वोढ़ी नवोढ़ामिव राज्यमानम् ।। २५

बलैरसंख्यैर्भुवनानि अकम्पयत् सस्नौ स्वयं पुष्करतीर्थराजे ।
दानान्यनेकानि च सुवृत्तानि, चकार भूपः परमप्रभावः ।। २६

अन्तस्तडागं जगदीश राणो, जगन्निवास प्रतिमप्रभावः ।
जगन्निवासास्पद तुल्यरूपं, जगन्निवासभुवनं ससर्ज ।। २७

तस्माद् वभूव—वीर्य प्रतापसिंहः, पृथिवीपतिर्यः ।
पौरानशेषान् द्रविणौघहारीन् कारागारं संजग्नहे समर्थः ।। २८

यस्मिन् महीं शासति मेदिनीशे, चोराय गेया श्रुतिरेवमासीत् ।
सिंहात् कुरंग इव यद् भयार्त्ता, भंजुर्दिगन्तान् भुवि तस्कराद्या ।। २९

नासेहिरे यस्य परं प्रतापं, प्रतापसिंहस्य सपत्नादयाः ।
गतीष्म—ध्येऽह्नि यस्योष्ण रश्मि स तापयामास बलादरातीन् ।। ३०

येनाराति-बधूविलोचनजलै स्सिञ्चिता मेदिनी, यन्नामन्नि स्मृत इव नीरिपुगणानिन्द्रात् भेर्जुनिशि ।
यस्योद्दाम मही ध्रुवुर्क शभुजस्तम्भैर्धराधारिता वीरोऽसौ नृपतिर्बभूव वसुधा चक्रे प्रतापाभिधः ।। ३१

---

१. अर्थात् 'राजसमुद्र' का बन्धा. जयसिंह प्रथम ने कालान्तर में 'जयसमुद्र' का निर्माण कराया था.
२. अर्थात् 'जगन्नाथ-जगदीश'.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्यात्मज सकलगौरगुणैरुदारः श्रीराजसिंह नृपतिः सवितेव जातः ।
यस्मिन्नुदारचरिते नृपतौ प्रजानो हृन्नेत्रवक्रकमलानि विकासमापुः ।। ३२

अस्ति पश्चिम तोयराशि तटभूदेशेषु देशः शिवो[1] झालावाड़ इति प्रथमधिगतः सर्वार्थसम्पत्प्रदः ।
चातुर्वर्ण्यमयी प्रजानवरतं धर्मं चरन्तीमुदा वेदोक्ते विधिपूर्वके निवसतं यस्मिन् सदातिभया ।। ३३

रणछोड़ पुरीति नामधेया विषये तत्र विभाति शोभना ।
सुरराजपुरी...............नरनारीभिरलं सुसेविता ।। ३४

शक्रो यः प्रतिपत्तपक्षदलने प्रौढ़-प्रतापानलः ज्योति—प्तादिगन्तरा समभवत् तत्राथ पृथ्वीपतिं ।
शूरः सत्पुरुसः प्रियोशुभक्तांश—शरण्यसुधी कन्दर्पोपम दर्शनो-मृगदृशां श्रीमान्सिंहाभिधः ।। ३५

शूरः सुरूपः सुभगोऽभिमानी नेता नराणामरिवर्गजेता ।
बभूव तस्याथ सुतो विनीतो राजा रसज्ञो भुवि रायसिंहः ।। ३६

घी विक्रमैः पीडितशत्रुमर्मा सुरक्षित क्षत्रियधर्मवर्मा ।
सुपूर्णराकेश्वर तुल्यधामा तस्यात्मजोभूदथ चन्द्रसिंहः ।। ३७

सकलशास्त्रविचारविशारदः सकलशस्त्रभृतामपि पूजितः ।
सकलदानकरोऽस्य सुतोवना—वभयराज इति—धितां भवत् ।। ३८

अमरराज सम द्युति उज्वल द्विरदराज कराभबृहद् भुजः ।
मनुजराज समाजसमाजितो विजयराज नृपोऽस्य सुतोऽभवत् ।। ३९

राजा सहस्वात्त समानकीर्तिः सहस्र बाहूरिव तुल्यतेजः ।
सहस्रमल्लाधिक वीर्यसारः सहस्रमल्लोस्य सुतो बभूव ।। ४०

राजा प्रजापालन लब्धवर्णाः भूपः स कालो भर लोकपालः ।
कन्या स्फुरद भव्य विश्मल-लो गोपालसिंहोंऽस्य सुतो बभूव ।। ४१

आसीत् तनयो नृपः क्षितिभुजा मान्यं मनस्वीरर्ण कर्मः कर्मः गतः सतां सुखकरां यः कर्ण एवापरः ।
भूविख्यात यशावरोव सुमती करमंयर्त सोपमः कान्त कामदेव प्रतापदहन ज्वालावलीर्दाद्धषतम् ।। ४२

नृप विनय विवेक ज्ञान भक्ति प्रवीणः प्रवहदमृतधारा निर्मलांगप्रचारा ।
प्रथम पुरुष पुण्यैःपार्वतीवाद्रिभर्तुः बखतकुंवरी भामनी कन्यकास्या विरासीत् ।। ४३

तां भीष्मकस्येव सुतां कुमारी कृष्णोऽमरैः सेवितपादोपमः ।
भूभूमिपालार्चितपादपीठः प्रतापसिंहो विधिनोपेते ।। ४४

तस्मादजायत् राजसिंहो नरेशः सम्यक् वेशः पूजितः श्रीमहेशः ।
विश्वत्कीर्त्तिर्दानदूरीकृतार्थी विद्यास्फूर्ति मंन्मथस्येव मूर्ति ।। ४५

गुणौघरत्नसागरः भजादृशां सुधाकरः प्रतापपुंजभास्करो वसुंधरा धुरंधरः ।
विलासिनी मनस्मरः स्मरारि पूजनैरपरः यथा सराजसिंहजित् सुरेश्वरो नरेश्वरो ।। ४६

पदाभिषेकोत्सवे एव तेन हेम्नस्तुलादानमुदार बुद्धिः ।
यब्दु—ईवंशध कलामुपैति न कस्यचिद् भूमिभुजोपि बुद्धिः ।। ४७

---

१. ३३ वें श्लोक से राजसिंह द्वितीय की माता के पक्ष का उल्लेख महत्त्वपूर्ण है अर्थात् प्रशस्ति के पूर्वार्ध में मेवाड़ नरेशों का तथा उत्तरार्थ में झालावंशजों, उनके वंश की पुत्री बख्तकुमारी (राजसिंह की माता) आदि का.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शाश्वत सुधांशुरिव नेत्रयुगाभिरामः कामो य मौक्तिकेसु सर्वजनः पार्थव्याम् ।
आश्चर्यं मग्रहृदयः स्वयमत्र चित्र विन्यस्त मूर्तिरिव यस्य ददर्श मूर्तिम् ।। ४८

शौर्यौदार्य-विवेक-धैर्य-गुरुता गाम्भीर्य विधादिभिः । प्रौढेर्भूरिगुणोलंकृत तन्स्ताराधिराजच्छविः ।
स्वच्छान्तः करणः स्वधर्मनिरतः सत्यप्रतिज्ञोसतां । शास्ता सत्पुरुष प्रियोवति पति श्रीराजसिंहोऽभवत् । ४९

गायन्ति यस्य चरितानि मनोहराणि नार्यो नराश्च मुदितः क्षितिमण्डलोऽस्मिन् ।
स्मृत्वा सुचार्थं मनसो अश्रुपरीत नेत्रा रोमाञ्च चिह्नित समग्र शरीरभागा ।। ५०

एवं गुणो भूषित यो बभूव प्रतापसिंहात्मज राजसिंहः ।
दिवि क्षितौ दिक्षु रसातलोपि गायन्ति गौराणि यशांसि यस्य ।। ५१

मधुमथनमिवे न्दिरानुरूपं तमनुससार नरेश राजसिंहम् ।
प्रणय परवशा स्वपट्टराज्ञी सपदि गुलाबकुमारिका रसज्ञा ।। ५२

पतिव्रता प्राणसमापि यस्य प्रियंवदा शंतिपरारसज्ञा ।
चन्द्रप्रभेवाऽनुससाह तन्वी फतेहकुमारी[1] नृप राजसिंहम् ।। ५३

अजनृपतिमिवेन्दुमत्य वाप्राव्यतिलकं भुवि राजसिंहदेवम् ।
परिणयन् विधौ स्ववंश जाता सपदि गुलाब कुमारिकापरापि ।। ५४

रतलामपुरी[2] वपूर्नवोढा रतिरागेण च रुक्मणी कृष्णम् ।
समवा घर राजराजसिंह दमयन्तीव नलं नराधिराजम् ।। ५५

श्री हरेश्चरण पंकजार्चन, ध्यान कीर्तन विधूत कल्मषा ।
सत्कथा श्रवण केलमानसा, राजसिंह जननी विराजते ।। ५६

ईज हरि गुरु पूजा सक्त चित्ता नितान्तं गुणगण परिपूर्ण पुण्यशीला या श्रीः ।
जगति विदित झाला शुद्ध वंश प्रसूता, बखतकुंवरि नाम्नी राजसिंहस्य माता ।। ५७

हिमशिखर नितम्बः प्रस्रवज्जह्नुकन्या जलविमलविशुद्धाचार-पुण्यैरुदारा ।
सकलभुवन विश्व व्याप्त सत्कीर्तिपूरा बख्त कुंवरि नाम्नी राजते राजमाता ।। ५८

सा राजसिंह जननी नगरप्रवेश द्वारे सुशीतमधुरामल पुण्य नीराम् ।
वापीं चकार पथिपान्थजनाभिरामा श्री राजसिंहनृपतेर्बहु पुण्यहेतोः ।। ५९

प्रासादमप्यत्र जनाभिरामम् शिवस्य विश्रन्ति निमित्त शालम् ।
श्रीराजसिंहस्य नृपस्य माता चक्रे स्वसूनो र्बहुपुण्यहेतोः ।। ६०

श्री राजराजेश्वरपूजनार्थम् चकार पुण्यामिह पुष्पवाटीम् ।
यदीय पुण्यैश्च फलैः सुपूजितो मनीषितं यच्छति पूजकेभ्यः ।। ६१

संवन्नन्दधराष्ट भूपरिमिते (१८१९) ब्दे बाणनागर्तुभूत ।
(१६८५) शाके मासे च माधवेऽ[3] मलतरेपक्षेऽष्टमी जीवयो ।[4]

---

१. सम्भवतः इसी की ओर ओझा जी ने (उपर्युक्त, भाग २, पृ० ६४७) संकेत किया है-

२ रतलाम, मध्यप्रदेश.

३. अर्थात् 'वैशाख' मास.

४. जीव बृहस्पतिवार.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुष्यनक्षत्रे मिथुनाख्यलग्नसमये पूर्वेथ यामेऽकरोत ।
वप्पा शंकर मंदिरस्य जननी राज्ञः प्रतिष्ठां विधिम् ।। ६२

कुंडं मण्डपवितान तोरणैः दीपिते द्विजवरास्तु मण्डपे ।
वेदपाठमथ होममाशु ते मन्त्रपूत हविषा समासृजत् ।। ६३

तत्रान्वितो द्विजवरो नृपतेः पुरोधाः श्री नन्दराम जिवसौ विधिवच्चकार ।
वापी प्रतिश्रय शिवालय सम्प्रतिष्ठाम् श्री राजसिंहनृपते र्बहुपुण्यहेतोः ।। ६४

गोभूहिरण्य गजवाजिरथांशुकानि शैय्या सुवर्णमणिमण्डितभूषणानि ।
तस्मिन् महोत्सवविधौ प्रददौ दयालुः श्री राजसिंह नृपते र्जननी द्विजेभ्यः ।। ६५

यज्ञोपवीतानि ददौ द्विजाति—बालेभ्य एषा सुतरां दयालुः ।
श्री राजसिंहस्य नृपस्य माता कन्या विवाहान् शतशश्चकार ।।६६

नित्यदापि खलु पर्व पर्वसु राजसिंह जननी मुहुर्मुहुः ।
धेनुधान्य मणिकाञ्चनान्ययो विप्रभोजनमनेकशोप्यदात् ।। ६७

इत्थं तत्र चतुर्मुखं सगिरिजं संस्थाप्य नाम्ना शिवम्,
प्रासादे हिमशैलशृंगसदृशे श्रीराजराजेश्वरम् ।
वापीं पुण्यजलां विधाय विधिवत् कृत्वा प्रतिष्ठा विधिः,
लेभे पुण्यमनंतकं जननी श्री राजसिंहप्रभोः ।। ६८

उपर्युक्त बृहत्प्रशस्ति में कतिपय शुद्धियां करके इसके विशद विवेचन की परम आवश्यकता है. आशा है तत्कालीन इतिहास के विद्वान् इस कार्य को पूरा कर शीघ्र ही अधिक प्रकाश डालने का कष्ट करेंगे. प्रस्तुत निबन्ध में तो उक्त प्रशस्ति का सारांश ही प्रस्तुत किया गया है. प्रस्तुत प्रशस्ति में तत्कालीन मेवाड़नरेश अरिसिंह द्वितीय के नाम की अविद्यमानता खटकती ही है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org